अनौपचारिका

समकालीन शिक्षा-चिन्तन की मासिक पत्रिका

वर्ष : 53 अंक : 3 फाल्गुन-चैत्र वि.सं. 2082-83 मार्च, 2026 पृष्ठ-28 RNI 43602/77 ISSN No.2581-981x

स्मृतिशेष

भारत में आधुनिक समाजशास्त्र की नींव रखने वाले आंद्रे बेते नहीं रहे

भारत में आधुनिक समाजशास्त्र की नींव रखने वाले प्रोफेसर आंद्रे बेते का तीन फरवरी को दिल्ली निधन हो गया। वे 91 वर्ष के थे। उनके साथ ही भारतीय बौद्धिक जीवन के एक महत्वपूर्ण अध्याय का अंत हो गया।

वे उस ज्ञान परंपरा से संबंधित थे जहां बदलाव की चाहत का शोर शराबा नहीं किया जाता, बल्कि उसके लिए एक खामोश प्रतिबद्धता के साथ काम किया जाता है। रामचंद्र गुहा ने आंद्रे बेते को भारत का सबसे बुद्धिमान व्यक्ति कहा था। कम लोग जानते हैं कि आंद्रे बेते ने फिजिक्स की पढ़ाई की थी. समाजशास्त्र की तरफ वो बाद में मुड़े।

आंद्रे बेते के सामने आजादी के बाद भारत को समझने की चुनौती थी। औपनिवेशिक ज्ञान-श्रेणियां अप्रासंगिक हो चुकी थीं, पर लोकतंत्र ने पुरानी असमानताओं को समाप्त नहीं किया था। बेते का अकादमिक जीवन मुख्यतः दिल्ली स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स से जुड़ा रहा। उन्होंने ऑक्सफोर्ड, कैंब्रिज, लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स और शिकागो विश्वविद्यालय जैसे संस्थानों में भी अध्यापन किया। इसके बावजूद उनका काम भारतीय यथार्थ से गहरे जुड़ा रहा।

वस्तुगत यानि ऑब्जेक्टिव रहते हुए भी आंद्रे बेते ने भारतीय समाज को शुष्क निगाहों से नहीं बल्कि सहानुभूति के साथ देखा-परखा फिर लिखा। यह उनकी खासियत थी। उनकी किताब कास्ट, क्लास एंड पॉवर क्लासिक का दर्जा रखती है, जो तमिलनाडु के एक गांव में किये गये उनके फील्ड अध्ययन पर आधारित थी। इसमें बेते ने स्पष्ट किया कि जाति को वर्ग और सत्ता से अलग कर नहीं समझा जा सकता।

'स्टडीज इन एग्रेरियन सोशल स्ट्रक्चर', 'इनइक्वैलिटी एंड सोशल चेंज', 'सोसाइटी एंड पॉलिटिक्स इन इंडिया' और 'एंटीनॉमीज ऑफ सोसाइटी' में आंद्रे बेते बार-बार असमानता के प्रश्न पर लौटे। उनका आग्रह था कि सामाजिक श्रेणियां शिक्षा, भूमि, राजनीति और आधुनिक संस्थाओं से निरंतर बदलती रहती हैं।

वे सांस्कृतिक रोमानीकरण और वैचारिक हठधर्मिता से सतर्क रहते थे। उनके लिए आलोचना का आधार समझ था। 'क्रॉनिकल्स ऑफ आवर टाइम' जैसे संग्रहों में संकलित किये गये उनके निबंध आरक्षण, धर्मनिरपेक्षता और लोकतंत्र जैसे विषयों पर बिना सरलीकरण के विचार करते हैं। वह मानते थे कि विचार इसलिए महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि वे संस्थाओं और जीवन को आकार देते हैं, और लापरवाह सोच के सामाजिक परिणाम होते हैं।

पद्मभूषण और अंतरराष्ट्रीय सम्मानों के बावजूद बेते ने बौद्धिक विनम्रता और अनुशासन को कभी नहीं छोड़ा। उन्होंने दिखाया कि स्पष्टता और जटिलता एक साथ संभव हैं, कि संयम समाज को गंभीरता से लेने का तरीका है।❑

क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः।
स्मृतिभ्रंशाद्बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति।।

(गीता, द्वितीय अध्याय, श्लोक 63)

क्रोध से मनुष्य की मति मारी जाती है जिससे स्मृति भ्रमित हो जाती है। स्मृति-भ्रम हो जाने से मनुष्य की बुद्धि नष्ट हो जाती है और बुद्धि का नाश हो जाने पर मनुष्य खुद अपना ही का नाश कर बैठता है।

समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सहचित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि।।
समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।। ऋग्वेद

अनौपचारिका

समकालीन शिक्षा-चिन्तन की पत्रिका

वर्ष : 53 अंक : 3 फाल्गुन-चैत्र वि.सं. 2082-83 मार्च, 2026 मूल्य : पचास रुपये

क्र म

वाणी

3. गीता श्लोक

संपादकीय

5. कर्म को सहज बनाती है शिक्षा !

विमर्श

7. दुनिया एक ही समय कई दिशाओं से आपके दरवाज़े पर आती है !
– निरुपमा मेनन राव

अभिमत

10. विश्वविद्यालयों के कुलपति नियुक्तियों में राजनीति
– शेली वालिया

12. जल, वायु और भूमि का संतुलन !
– सुरेन्द्र बांसल

14. स्ट्रीट फोटोग्राफी : खुद को जानना

अभिमत

16. ब्रांडिंग के युग में विश्वविद्यालय
– अविजित पाठक

लेख

18. राजस्थानी दूहों में सर्वकालिक शिक्षा
– डॉ. कन्हैयालाल खाँड़पकर

20. बेहतर मानसिक स्वाथ्य के लिए डायरी लिखें !
– डॉ. प्रियंका रावत

22. अनुवाद सृजन का कायान्तरण होता है !
– डॉ. प्रिया सूफी

24. राजस्थान में कृषि शिक्षा में निवेश की जरूरत
– प्रो. प्रकाश नारायण कल्ला

खबर

26. अविनाश भार्गव की याद
दिल्ली में नामवर सिंह जन्म शताब्दी संगोष्ठी

श्रद्धांजलि

27. सरला माहेश्वरी नहीं रहीं

राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति
7–ए, झालाना डूंगरी संस्थान क्षेत्र,
जयपुर–302004
फोन : 2700559, 2706709, 2707677
ई-मेल : raeajaipur@gmail.com
www.raea.in

संपादक :
राजेन्द्र बोड़ा
प्रबंध संपादक :
दिलीप शर्मा

कर्म को सहज बनाती है शिक्षा!

आये दिन हम उम्र-दराज लोगों से सुनते आये हैं कि सब कर्मों का चक्कर है, कर्मबंधन में पड़े हैं। इसे प्रगतिशील विचारकों ने पलायनवाद माना। देखा जाये तो मानव जीवन और कर्म का अटूट सम्बन्ध है। मनुष्य कर्म किये बिना रह नहीं सकता क्योंकि कर्म बिना शरीर का निर्वाह भी नहीं हो सकता। हमारा खाना, पीना, सोना – यह सब कर्म ही तो है।

मगर जैन धर्म कर्म को आत्मा के बंधन का मुख्य कारण मानता है। इस अवधारणा के अनुसार आत्मा की मुक्ति तभी संभव है जब सभी कर्मों का क्षय हो जाए, जिसके लिए तप, संयम, अहिंसा, सत्य, और आत्म-नियंत्रण का पालन अनिवार्य माना गया है। इस पंथ में कर्मबंध से मुक्त होने के पांच उपाय बताए गये हैं: सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान, सम्यक् चरित्र, तप, और राग-द्वेष का त्याग। जब कोई जीव राग (आसक्ति) और द्वेष (घृणा) जैसे भावों से प्रेरित होकर कार्य करता है, तो कर्म के सूक्ष्म कण आत्मा से चिपक जाते हैं। इसे जैन परंपरा में कर्मबंध कहते हैं। ऐसा माना जाता है कि जब आत्मा सारे कर्मों से मुक्त हो जाती है, तब वह मोक्ष को प्राप्त होती है। इस स्थिति में आत्मा शुद्ध, ज्ञानस्वरूप और अनंत आनंदमयी बन जाती है।

गीता में भी कर्म की बात आती है। उसमें कर्म से मतलब अपने कर्तव्य को करने से है। अपने कुटुंब की सेवा करना, विद्या अर्जन, जनसेवा – सब कर्तव्य में सम्मिलित है। कर्म का अर्थ है अपने कर्तव्य को करने की बाह्य स्थूल क्रिया। विकर्म का अर्थ है निषिद्ध कर्म। आचार्य विनोबा भावे ने विकर्म का अलग ही अर्थ बताया है। उनके अनुसार कर्म में चित्त को लगाना ही विकर्म है। एक यथार्थ कर्म करने के लिए आवश्यक है कि हमारा भीतर और बाहर दोनों एक हों। बाहर से हम किसी को नमस्कार करते हैं, लेकिन सिर झुकाने की इस ऊपरी क्रिया के साथ यदि भीतर मन भी न झुकता हो तो बाह्य क्रिया व्यर्थ है। मंदिर में जाकर मूर्ति पर जलधारा के साथ यदि मानसिक चिंतन की धार न बहे तो वह जलाभिषेक व्यर्थ है। सच्चा कर्म तभी सिद्ध होता है जब हमारे बाह्य कर्म के साथ अंदर से चित्त शुद्धि रूपी कर्म का भी संयोग बने। यही दूसरे शब्दों में निष्काम कर्म कहलाता है। अपना कर्तव्य यदि हम मन से नहीं कर पाते तो वह कर्म नहीं धोखा होता है। कर्म के साथ जब मन का मेल हो तो तभी वह सच्चा कर्म बनता है। कर्म के साथ मन का मेल होने से धीरे धीरे निष्कामता हमारे अंदर आ जाती है। मन के मेल से रहित कर्म

जड़ है। मन से किया कर्म दिव्य दिखाई देने लगता है। यही सनातन और पारंपरिक शिक्षा है जो सिखाती है कि जिसे कर्म करने पर भी कर्म का बोझ मालूम नहीं होता वही अकर्ता होता हैं।

कर्म में अकर्म ढूंढने के लिए सत्पुरुषों की संगति अत्यंत सहायक होती है। शिक्षक को सुनने और उससे अध्ययन करने से पूरी बात नहीं बनती। वास्तविक जीवन की शिक्षा के लिए ज्ञानियों और विद्वानों की संगत कल्याणकारी होती है।

अपना कर्तव्य करते हुए भी अलिप्त कैसे रहें, काम क्रोध से परे कैसे रहें, लोभ मोह से पड़े और अपने अतीत से भी परे किस तरह हो जाएं यह शिक्षा पाठ्य पुस्तकों में नहीं मिलती। निर्विकार कर्म जब एक के बाद एक सहज भाव से होने लगते हैं तो पता भी नहीं चलता कि कर्म सहज ही कब हो गया। सहज कर्म का ही दूसरा नाम अकर्म है।

यही असली शिक्षा है कि कर्म में कोई कष्ट मालूम नहीं पड़े। मन निर्मल और शांत रहे। बहुत कठिन अवसर भी फिर कठिन नहीं लगते। कर्म का भी भान नहीं होता और आध्यात्मिक भाव से कहें तो कर्मबंधन छूट जाता है।

मनीशियों ने कहा है कि जो मनुष्य कर्म करते हुए भी कर्तापन का अभिमान नहीं रखता उसका कर्म अकर्म होता है। जो मनुष्य बाहर से कर्म का त्याग करके भी मन में हवाई किले बांधा करता है उसका वह अकर्म भी कर्म होता है। महात्मा गांधी ने भी प्रेममय, ज्ञानमय सत्य और अहिंसा की सुंदर शिक्षा दी। प्रेम से ओतप्रोत कर्म मामूली कर्म से भिन्न हो जाता है। अपने जीवन के सभी कर्मों को ही भारतीय वांग्मय में पुरुषोत्तम योग कहा गया है।

यह प्रश्न उठ सकता है कि है – अपने कर्त्तव्य का निश्चय कैसे किया जाए? आचार्यों का कहना है कि कर्त्तव्य स्वाभाविक होता है। उसे खोजने की कल्पना ही विचित्र है। मनुष्य के जन्म के साथ उसका कर्त्तव्य भी जन्मता है। बच्चा जैसे अपनी मां की तलाश नहीं करता वैसे ही कर्त्तव्य भी किसी को ढूंढना नहीं पड़ता, वह तो पहले से ही प्राप्त होता है। जिन माता-पिता के घर हम जन्म लेते हैं उनकी सेवा, जिन पड़ोसियों के बीच जन्में हैं उनकी सहायता, यह कर्म तो हमें जन्मतः ही मिले हैं, इसके अतिरिक्त हमारी निज की वृत्तियां – भूख प्यास इत्यादि – हमें बताती हैं कि भूखे को भोजन देना, प्यासे को पानी पिलाना तो हमारा कर्त्तव्य है। इस प्रकार कर्त्तव्य हमें खोजना नहीं पड़ता ।

सच्ची शिक्षा बताती है कि कर्म ही हमरे वर्तमान जन्म, वातावरण, सुख-दुःख, सफलता-असफलता व लाभ-हानि का आधार है। जैसा हम बोते हैं, वैसा फल पाते हैं। कर्म ही भाग्य का दूसरा नाम है। अपना भाग्य हम अपने हाथों से बनाते हैं।

भारतीय मेधा में संचित, प्रारब्ध और क्रियमाण तीन प्रकार के कर्म बताए जाते हैं। कर्म चित्तशुद्धी के साथ किए जाने पर भक्ति, ज्ञान और कर्म का समन्वय हो जाता है। कर्म करते हुए भी हम उस अवस्था में कर्म के बोझ से बोझिल नहीं होते क्योंकि हम में कर्त्ता का भाव नहीं रहता। इस तरह कर्म करते करते सब तरह के कर्मबंधन स्वतः ही छूट जाते हैं और केवल रहता है एक अखंड ज्ञान प्रकाश और वह है सबको अपने समां मानना। ❑

दुनिया एक ही समय कई दिशाओं से आपके दरवाज़े पर आती है!

❑

❑

निरुपमा मेनन राव

पूर्व विदेश सचिव जो अमेरिका और चीन में भारत की राजदूत रह चुकी हैं, बता रही हैं कि हमारा भोजन, संगीत, विचार और भावनाएं कई परतों वाले अतीत से बनी हैं। पवित्रता की तलाश में इसे हटाने की कोशिश यह समझने से चूक जाती है कि संस्कृतियाँ कैसे जीवित रहती हैं। सं.

जब कोई तमिल बोलने वाला किसी तारीफ़ में शाबाश ! कहता है, तो वह इतिहास की एक बहुत ही खास कड़ी से जुड़ रहा होता है। यह शब्द, फ़ारसी शब्द शाद बाश – खुश रहो – का छोटा रूप है, और इसका एक लंबा इतिहास है।
यह अरकोट के नवाबों के प्रशासनिक न्यायालयों से गुज़रा, 19वीं और 20वीं सदी की शुरुआत में पारसी थिएटर मंडलियों के शानदार प्रदर्शनों से गुज़रा, सत्ता, मनोरंजन और सार्वजनिक जीवन से गुज़रा, और फिर तमिल दिल में बस गया। आज, यह बस वहीं का है।

ये उधार के शब्द हैं, जैसे कि वे अस्थायी मेहमान हों, लौटाने के इरादे से उधार ली गई चीज़ें। लेकिन भाषा लाइब्रेरी की तरह काम नहीं करती। एक बार जब कोई शब्द भावना के साथ बोला जाता है, तो वह सोच की बनावट में शामिल हो जाता है, जो अर्थ और भावनाओं से भरा होता है।

पिछली पांच सदियों में, दुनिया में एक ऐसा जैविक, वानस्पतिक और भाषाई बदलाव हुआ है कि पूरी तरह से देसी पहचान का विचार एक ऐतिहासिक कल्पना बन कर रह गया है। सांभर में मिर्च अमेरिका से आई, जिसे पुर्तगाली जहाज़ों और औपनिवेशिक भूख ने पहुंचाया। टमाटर, जो अब भारतीय रसोई के लिए ज़रूरी है, उसी तरह आया। वायलिन, जो कर्नाटक संगीत के लिए इतना ज़रूरी है कि अब उससे अलग नहीं लगता, एक यूरोपीय आयात है जिसने धैर्य और शानदार तरीके से भारतीय सुरों में बोलना सीखा। रोज़मर्रा की ज़िंदगी भी एक ऐसी गहरी मिली-जुली संस्कृति से बनी है जो प्राचीन लगती है, भले ही वह न हो। आक्रमण की कहानियों के बजाय, यह एक लगातार आदान-प्रदान का नतीजा है।

मलयालम जैसी भाषा का आधुनिक वक्ता होने का मतलब है एक

ऐसा बोझ उठाना जो प्राचीन और बहुत बड़ा है। मलयालम दो अलग-अलग वंशों के मिलन बिंदु पर बनी थी: प्राचीन, ज़मीनी, सभ्य तमिल आधार और ऊंची, बौद्धिक संस्कृत की छत। एक बनावट, स्पर्श और ज़मीन, मूल कहानियों और मेहनत से जुड़ाव देता है। दूसरा अमूर्तता, तत्वमीमांसा और अनंत के लिए शब्दावली प्रदान करता है।

इतिहास में, इससे मणिप्रवालम नाम की एक साहित्यिक कला शैली बनी, जिसका शाब्दिक अर्थ है माणिक और मूंगा। यह रूपक एकदम सही है। मूंगा ऑर्गेनिक, झरझरा होता है, जो अनगिनत जीवित जीवों से धीरे-धीरे बनता है, जबकि माणिक क्रिस्टलीय, कठोर, अपवर्तक होता है, और अपनी रोशनी को पकड़ने और मोड़ने की क्षमता के लिए कीमती माना जाता है। एक कलात्मक दर्शन के रूप में, मणिप्रवालम यह मानता है कि जीती-जागती सच्चाई को एक ही खांचे में नहीं रखा जा सकता। यह दो सांस्कृतिक खांचों के एक साथ होने को दिखाता है। स्थानीय भाषा ने संरचना और अपनापन दिया, जबकि संस्कृत ने पहुंच और गूंज दी।

मणिप्रवालम में लिखने का मतलब यह मानना था कि दुनिया एक ही समय में कई दिशाओं से आपके दरवाज़े पर आती है। इसका मतलब यह स्वीकार करना था कि पहचान बिना बिगड़े कई परतों वाली हो सकती है। कोई एक ही सांस में गांव और ब्रह्मांड दोनों से बात कर सकता था।

महाराष्ट्र में, अभंग, जिसका मतलब है अखंड, ने भी ऐसा ही चमत्कार किया, लेकिन नीचे से। भक्ति संतों ने यह मानने से इनकार कर दिया कि आध्यात्मिक जटिलता संस्कृत के अंदर बंद रहनी चाहिए, जिसकी रखवाली पुजारी करते हैं। उन्होंने मेटाफ़िज़िक्स को सड़क पर खींच लिया और उसे रोज़मर्रा की ज़िंदगी की लय में गाने के लिए मजबूर किया।

अभंग, जो भाषाई लोकतंत्र का एक क्रांतिकारी काम था, आत्मा, भक्ति और समर्पण के बारे में सबसे ऊंचे दार्शनिक सवालों को कुम्हारों, दर्ज़ियों, किसानों और घूमने वाले गायकों के मुंह में डालता है। इसके रूपक काम से आते हैं: घूमता हुआ पहिया, सिलाई करने वाला हाथ, जोता हुआ खेत।

यहां, रोज़मर्रा की ज़िंदगी का

बोझ मोक्ष के रास्ते में रुकावट नहीं, बल्कि एक ज़रिया है। अभंग इस बात पर ज़ोर देता है कि ईश्वर मेहनत के ज़रिए सांस लेता है। गली-मोहल्ले की भाषा को अपनाने से इनकार न करके, भक्ति परंपरा ने खुद को अमर बना लिया। यह जीवित और धड़कती हुई है, संस्थानों की सीमाओं में बंद होने का विरोध करती है क्योंकि यह गीत, दोहराव और यादों में ज़िंदा रहती है।

आज, शुद्धिकरण की ओर एक बढ़ता हुआ वैश्विक आकर्षण है। सीमाओं, अपनेपन, हिसाब-किताब और नुकसान की चिंता के दौर में, बहुत से लोग एक काल्पनिक स्वर्ण युग की तलाश में पीछे मुड़ते हैं, जो बाहरी प्रभावों से पूरी तरह साफ हो। भाषा, कला और संस्कृति की प्रामाणिकता की जांच की जाती है।

जो अपना नहीं है, उसे हटाने के लिए चिति किया जाता है।

लेकिन शुद्धिकरण कमज़ोर करने के लिए एक विनम्र शब्द है। जब हम प्रभाव को खत्म करने की कोशिश करते हैं, तो हम खुद को कमज़ोर पाते हैं। इतिहास के बोझ को हटाना उन नसों को काटना है जो हमें व्यापक मानवीय कहानी से जोड़ती हैं।

जब भाषा को शुद्ध किया जाता है, तो न सिर्फ़ शब्द बल्कि अनुभव के बस्ते भी साफ़ हो जाते हैं। यह कानून और व्यापार, माइग्रेशन और बातचीत, मुलाकात और तालमेल की भाषा का नुकसान है। जो संस्कृति अपने प्रभावों को काट देती है, वह असली होने के बजाय कमज़ोर हो जाती है।

खुद को देखने का एक और तरीका है: एक काउंटरपॉइंट के रूप में। संगीत में, काउंटरपॉइंट स्वतंत्र मेलोडिक लाइनों को एक साथ हार्मोनिक बातचीत में रखने की कला है। हर आवाज़ अपनी पहचान बनाए रखती है। कोई भी हावी नहीं होती। मतलब एकरूपता के बजाय रिश्ते से निकलता है।

तमिल जड़ मेलोडी देती है – अस्तित्व, आत्मीयता और जगह का व्याकरण। संस्कृत या फ़ारसी भार सद्भाव देता है – ऐतिहासिक मुलाकातों तक पहुंच, जो हमारे मानवीय अनुभव में गहराई से जुड़ी हुई हैं। जब ये आवाज़ें काउंटरपॉइंट में काम करती हैं, तो नतीजा गहराई होता है।

कई सभ्यताओं को ले जाने में सक्षम भाषा कमज़ोर होने के बजाय रेंज से मज़बूत होती है। यह फुसफुसा सकती है और ऐलान कर सकती है। यह प्रार्थना कर सकती है और मोलभाव कर सकती है। यह शोक मना सकती है और जश्न मना सकती है। ऐसी भाषा एक ऑर्केस्ट्रा है।

आज जीना मणिप्रवालम को अपनाना है। हमारा खाना, संगीत, सोच और भावनाएं कई परतों वाले अतीत से आती हैं। हम पिछले माइग्रेशन और इतिहास के चलते-फिरते आर्काइव हैं। पवित्रता की मायावी खोज में इसे हटाने की कोशिश यह समझने से चूक जाती है कि संस्कृतियां कैसे जीवित रहती हैं।

निरंतरता याददाश्त के साथ तालमेल है, न कि एक सीधी एकरूपता। इसलिए, हमें प्रभाव के भूत भगाने का विरोध करना चाहिए और इस डर को खारिज करना चाहिए कि हाइब्रिडिटी हमें कमज़ोर करती है।

इतिहास का बोझ कोई बोझ नहीं है बल्कि एक संतुलन है जो हमें मुश्किल समय में सीधा रखता है। यह हमें झटके सहने, दुनिया भर में अनुवाद करने, खुद को खोए बिना दूसरों के लिए समझने योग्य बने रहने की अनुमति देता है।

हमारे अस्तित्व का मणिप्रवालम जीवित है, सांस ले रहा है, मतलब जमा कर रहा है। इसका सम्मान करना यह सुनिश्चित करना है कि संस्कृति मिटाने या कमज़ोर करने के बजाय एक जीवित बातचीत बनी रहे।❑

विश्वविद्यालयों के कुलपति नियुक्तियों में राजनीति

❑

शेली वालिया

लेखक कल्चरल क्रिटिक और रॉदरमेयर अमेरिकन इंस्टीट्यूट, ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी के पूर्व सीनियर फेलो हैं, विश्वविद्यालयों के मौजूदा हालात पर पीड़ा दर्शाते हुए उसे बदलने की जरूरत बता रहे हैं। सं.

❑

यह बात अक्सर कही जाती है कि विश्वविद्यालय समाज के नैतिक कम्पास का काम करती हैं। भारतीय संदर्भ में यह बात खास मायने रखती है, जहां पक्षपाती चालों में फंसी नियुक्ति प्रणाली द्वारा विवेक की रक्षा करने वालों को ही धीरे-धीरे दबाया जा रहा है। नतीजतन, बौद्धिक कठोरता और अकादमिक उत्कृष्टता के पवित्र सिद्धांतों को राजनीतिक फायदे के लिए व्यवस्थित तरीके से दबाया जाता रहा है। यह स्पष्ट दिखता है कि औसत दर्जे के लोगों को अक्सर इनाम मिलता है, जबकि काबिलियत को नुकसान उठाना पड़ता है।

इस शैक्षणिक बीमारी की जड़ में एक परेशान करने वाली पहेली है कि उच्च शिक्षा के हमारे संस्थान राजनीतिक रूप से नियुक्त लोगों के चंगुल में क्यों रहते हैं?

अभी कुछ दिन पहले, मेरी पत्नी ने कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी की पूर्व छात्रा के तौर पर उसके चांसलर के चुनाव के लिए वोट दिया। यह सिर्फ़ एक रस्म नहीं थी; यह शांत गरिमा का एक पल था, इस विचार की पुष्टि थी कि दुनिया के सबसे पुराने संस्थान भी तभी आगे बढ़ते हैं जब वे अपने समुदाय पर इस बात का भरोसा करते हैं कि वे उनके भविष्य को आकार देंगे। दस शॉर्टलिस्ट किए गए उम्मीदवारों का विज़न राइट-अप हर वोटर को भेजा गया ताकि वे तय कर सकें कि कौन सबसे ज़्यादा योग्य है। यह प्रक्रिया कई महीनों तक चली, इसमें कड़ी जांच-पड़ताल, खुला नॉमिनेशन शामिल था, और दुनिया भर के पूर्व छात्रों के लोकतांत्रिक वोट के साथ यह खत्म हुई।

लॉर्ड स्मिथ, जो पहले खुले तौर पर गे ब्रिटिश सांसद और कला, संस्कृति और शिक्षा के लंबे समय से समर्थक हैं, उन्हें राजनीतिक फायदे के लिए नहीं, बल्कि उन मूल्यों के साथ तालमेल बिठाने के लिए चुना गया जिन्हें वह बनाए रखना चाहते हैं - ईमानदारी, बौद्धिक स्वतंत्रता और सार्वजनिक जीवन के प्रति प्रतिबद्धता। वह विद्वत्ता, नागरिक जुड़ाव और अटूट दृढ़ता के एक सहजीवी संगम का उदाहरण हैं, जो संस्थान की बौद्धिक स्वतंत्रता, विश्वविद्यालय की स्वायत्तता और नैतिक अनिवार्यताओं के प्रति

स्थायी प्रतिबद्धता का प्रमाण है जो शैक्षणिक पहल को आधार देती हैं।

इस बात ने मुझे सोचने पर मजबूर कर दिया कि भारत में चांसलर और, इससे भी ज़्यादा, वाइस-चांसलर की नियुक्तियों में कितना बड़ा और परेशान करने वाला अंतर है। पूर्व छात्रों की वोटिंग का यह मामूली सा दिखने वाला काम यह दिखाता है कि भारत में हमने उच्च शिक्षा के क्षेत्र में कितने दुखद रूप से क्या खो दिया है, खासकर संस्थागत विश्वास, भागीदारी वाली गवर्नेंस और विद्वत्ता के प्रति सम्मान। कैम्ब्रिज या ऑक्सफ़ोर्ड के उलट, भारतीय विश्वविद्यालय एक ऐसे सिस्टम में फंसे हुए हैं जहां नियुक्तियां गोपनीय रखी जाती हैं, वे राजनीतिक इच्छाओं से तय होती हैं, और नौकरशाही के आदेशों से पूरी की जाती हैं।

इस अजीब संस्थागत व्यवस्था में, एक राज्य का राज्यपाल दोहरी भूमिका निभाता है, न केवल राज्य के औपचारिक प्रमुख के रूप में, बल्कि अपने अधिकार क्षेत्र के सभी सार्वजनिक विश्वविद्यालयों के चांसलर के रूप में भी। कार्यकारी शक्ति को शैक्षणिक निर्णय लेने के साथ मिलाना एक पुरानी समस्याग्रस्त प्रथा है जो औपनिवेशिक अतीत से मिली। यह व्यवस्था राजनीति को विश्वविद्यालयों पर बहुत ज़्यादा हावी होने देती है, जिससे उनकी अखंडता और उद्देश्य कमज़ोर होते हैं। कैम्ब्रिज जैसी प्रतिष्ठित संस्थाओं के बिल्कुल उलट, हमारे विश्वविद्यालयों के प्रमुख अक्सर पर्दे के पीछे की बातचीत से चुने जाते हैं, जो अक्सर राजनीतिक रूप से प्रेरित समितियों से प्रभावित होते हैं या, इससे भी ज़्यादा चिंताजनक बात यह है कि चांसलर-राज्यपाल द्वारा एकतरफा नियुक्त किए जाते हैं। इस प्रक्रिया में पूर्व छात्रों की भागीदारी, शैक्षणिक इनपुट, या सार्वजनिक चर्चा नहीं होती है, जिससे विश्वविद्यालय समुदाय चुपचाप सब कुछ स्वीकार कर लेता है।

कई मामलों में, ये विश्वविद्यालय प्रमुख शैक्षणिक अखंडता के संरक्षक के रूप में नहीं, बल्कि पक्षपातपूर्ण दूतों के रूप में काम करते हैं, जो चुपके से फैकल्टी की नियुक्तियों को प्रभावित करते हैं, चयन प्रक्रियाओं में बाधा डालते हैं, और सत्ताधारी प्रतिष्ठान के लिए उनकी उपयोगिता के आधार पर उम्मीदवारों को रोकने या सुविधा देने के लिए अपने अधिकार का इस्तेमाल करते हैं। यह सिर्फ़ प्रक्रियात्मक अनियमितता से कहीं ज़्यादा है; यह एक गहरी संरचनात्मक लापरवाही है। इस महत्वपूर्ण पद के लिए नियुक्ति प्रक्रिया मनमानी से भरी होती है, जिससे

विश्वविद्यालय की नींव ही खतरे में पड़ जाती है। मौजूदा व्यक्ति का काम बौद्धिक रूप से नेतृत्व करना नहीं, बल्कि राजनीतिक रूप से प्रबंधन करना होता है।

यह विचार कि दुनिया भर के पूर्व छात्र वोट दे सकते हैं, सुनकर ही भारत में लोग हंसेंगे। स्वाभाविक रूप से, शिक्षा की मुक्तिदायक भावना अब उन लोगों द्वारा नियंत्रण की संकीर्ण इच्छा के अधीन हो गई है जो स्पष्ट रूप से ज्ञान की बेलगाम खोज और आलोचनात्मक जांच से डरते हैं। हम संस्थागत संरचना में एक प्रतिगामी परिवर्तन देख रहे हैं जहां राज्यपाल का फरमान, नौकरशाही की साज़िशें, और पक्षपातपूर्ण वफ़ादारी शैक्षणिक जीवन की रूपरेखा तय करते हैं। ऐसे परिदृश्य में, विश्वविद्यालय की स्वायत्तता और संस्थागत अखंडता वास्तव में कमज़ोर हो जाती है।

भारत को आगे बढ़ना ही होगा। कम से कम, उसे औपनिवेशिक काल की शासन की बेतुकी व्यवस्था को खत्म करना होगा। यूनिवर्सिटी ग्रांट्स कमीशन या उसके उत्तराधिकारी को वाइस-चांसलर के लिए स्वतंत्र चयन समितियों पर ज़ोर देना चाहिए, जिसमें अलग-अलग विषयों और क्षेत्रों के जाने-माने शिक्षाविद शामिल हों। अब समय आ गया है कि सिर्फ़ संस्थान में ही नहीं, बल्कि बौद्धिक क्षमता में भी विश्वास बहाल किया जाए। सर्च कमेटियों का गठन इस बात को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए कि किसी यूनिवर्सिटी की बौद्धिक संस्कृति उसके नेतृत्व की विषयगत पृष्ठभूमि से बहुत ज़्यादा प्रभावित होती है। जब वाइस-चांसलर न सिर्फ़ विज्ञान से, बल्कि लिबरल आर्ट्स और लिबरल साइंस से भी आते हैं, जहां विद्वानों को आलोचनात्मक रूप से पढ़ने, ऐतिहासिक रूप से सोचने और विचारों के साथ नैतिक रूप से जुड़ने के लिए प्रशिक्षित किया जाता है, तो संस्थान में स्वाभाविक रूप से एक समृद्ध शैक्षणिक जीवन होता है, जहां सेमिनार फलते-फूलते हैं, कॉन्फ्रेंस बढ़ती हैं, और कैंपस नौकरशाही चुप्पी के बजाय बातचीत की जगह बन जाता है।

हमें सिर्फ़ कैम्ब्रिज के वर्तमान चांसलर जैसे लोगों को देखना चाहिए, जिनका इंग्लिश लिटरेचर में डॉक्टरेट, खासकर वर्ड्सवर्थ पर, उन्हें विचारों, संस्कृति और मानवीय जटिलताओं के प्रति ऐसी संवेदनशीलता देता है जो अकादमी के नेतृत्व के लिए बहुत ज़रूरी है। इसकी तुलना उन वाइस-चांसलर की दुखद आम घटना से करें जिन्होंने शायद ही कभी कोई उपन्यास या कविता पढ़ी हो और जिनके लिए साहित्य और मानविकी बौद्धिक निर्माण की धड़कन के बजाय एक बाहरी शौक है। जब यूनिवर्सिटी का नेतृत्व ऐसे लोग करते हैं जो मानविकी से अछूते हैं, तो नतीजा बिना कल्पना के शासन और बिना दूरदर्शिता के प्रशासन होता है।

यही कारण है कि कैम्ब्रिज और ऑक्सफ़ोर्ड के उदाहरण मायने रखते हैं। वहां, चांसलर, हालांकि ज़्यादातर प्रतीकात्मक होता है, लेकिन उसे थोपा नहीं जाता। और वाइस-चांसलर, जो असली कार्यकारी प्रमुख होता है, उसे वैश्विक खोज, साथियों के मूल्यांकन और कड़ी जाँच के बाद चुना जाता है। भारत को इस सिद्धांत को फिर से अपनाना होगा। सबसे पहले, वाइस-चांसलर की नियुक्ति स्वतंत्र सर्च कमेटियों को सौंपी जानी चाहिए, जिसमें प्रतिष्ठित शिक्षाविद शामिल हों और फैकल्टी और छात्रों से भी इनपुट लिया जाए। इन कमेटियों को पारदर्शी तरीके से काम करना चाहिए, शॉर्टलिस्ट प्रकाशित करनी चाहिए और अपनी सिफारिशों को सही ठहराना चाहिए। दूसरा, पूर्व छात्रों को सिर्फ़ दान के लिए नहीं, बल्कि फैसलों के लिए भी फिर से जोड़ा जाना चाहिए। सेवानिवृत्त प्रोफेसर, एमेरिटस विद्वान, और यहां तक कि वर्तमान फैकल्टी भी बातचीत का हिस्सा क्यों नहीं होने चाहिए?

इस मुद्दे को संबोधित करने की अनिवार्यता को कम करके नहीं आंका जा सकता। विश्वविद्यालय सिर्फ़ शिक्षण संस्थानों के रूप में अपनी भूमिका से आगे बढ़कर, लोकतांत्रिक मूल्यों और नागरिक संस्कृति के महत्वपूर्ण भंडार के रूप में काम करते हैं। जब प्रशासनिक नेतृत्व पक्षपातपूर्ण निष्ठा से तय होता है, तो भारत के बौद्धिक भविष्य का रास्ता अनिश्चितता में लटक जाता है। इसलिए देश को यह तय करना होगा कि वह विश्वविद्यालयों को मौजूदा राजनीतिक सिस्टम का हिस्सा बना रहने दे, या उन्हें बौद्धिक खोज के स्वतंत्र दुर्ग के तौर पर बनाए। इन दोनों में से सिर्फ़ एक ही विकल्प एक गणतंत्र के बुनियादी वादे से मेल खाता है, जिसमें ज्ञान और आलोचनात्मक सोच सबसे ज़रूरी हैं। दांव साफ़ हैं। भारत की बौद्धिक ज़िंदगी का भविष्य और, सीधे तौर पर, उसकी लोकतांत्रिक व्यवस्था एक चौराहे पर खड़ी है।❑

जल, वायु और भूमि का संतुलन!

❑

❑

सुरेन्द्र बांसल

प्रकृति से प्रेम रखने वाले लेखक इस आलेख में विकास की आधुनिक अवधारणा पर सवाल उठा रहे हैं। सं.

हमारे यहां जो कुछ भी जीवनदायी है, वह सब पूजनीय है। यही भारत की आत्मा का सार है। युगों से हमारे ऋषि (शिक्षक) और समाजचिंतक जीवन में प्रकृति से सामंजस्य बैठाने का ही चिंतन करते आए हैं।

आज हमारी और हमारे नीति नियंताओं की समझ उथली हो चली है। हम सब ग़ैर ज़रूरी और वहन न कर सक्ने वाले विकास के रोगी बन चुके हैं। हमारी उपभोगवादी दृष्टि मात्र इतना ही सोच पा रही है कि ये नदी, पहाड़, पशु, परिंदे, जल, जंगल हमारे किसी काम आ सकते हैं या नहीं?

हम इनका दोहन कर सकते हैं या नहीं ? संसार के तमाम अर्थशास्त्रीय सिद्धांत प्राकृतिक संसाधनों के दोहन पर ही आधारित हैं और इनका सहारा लेकर दुनियाभर के नीति निर्धारक परंपरा से सहेजे गये प्राकृतिक संसाधनों की अंधाधुंध लूट की नीतियां बनाने में जुट गए। विकास के इस ग़ैर ज़रूरी मॉडल ने मानव और प्राकृति का संतुलन नष्ट कर दिया।

काका साहब कालेलकर ने कभी अरावली को 'पहाड़ों का पितामह' कहा था। उन्होंने अरावली की अद्भुत व्याख्या करते हुए कहा कि, '' लोगों को आश्चर्य होता है, जब हम कहते हैं कि पहाड़ों की जमात में सबसे युवा है हिमालय। दुनिया में यह कितना ही ऊंचा क्यों न हो, उसकी उम्र कुछ ही लाख वर्षों की है। विंध्य और पारियात्र जैसे बुड्ढों के सामने वह कल का बच्चा ही है।

भारत के कुल पर्वतों की सूची - महेन्द्रो (उत्कल), मलय (केरल) सह्य (कोंकण), शुक्तिमान्, ऋक्षपर्वत (सौराष्ट्र), विन्ध्यश्च (मध्य भारत), पारियात्रश्च (राजस्थान) सप्तैते कुलःपर्वताः - में उसे स्थान तक नहीं है।

यह प्राचीन पारियात्र ही आज का अरावली पर्वत है। लाखों वर्ष की गरमी और बारिश और काल बल से यह प्राचीन पहाड़ छिन्न-भिन्न हो गया है।

बरसों से अरावली की ख़ामोश छाती खौफ़नाक क्रशर मशीनों के हमले झेल रही है। उसने सदियों तक रेगिस्तान को अपनी दहलीज़ लांघने नहीं दिया। जब पश्चिम से थार का रेगिस्तान अपनी गर्म, रेतीली आंधी लेकर इस ओर बढ़ता है, तो अरावली एक जिद्दी पहरेदार की तरह सीना तानकर खड़ी हो जाती है। लेकिन शिक्षित समाज की कृतघ्नता देखिए, जिस दीवार ने उसे सदियों रेतीले अंधड़ों से बचाया, उसी दीवार की ईंटें नोच-नोचकर अपने लिए वातानुकूलित आरामगाह बना लिए हैं।❑

स्ट्रीट फोटोग्राफी: खुद को जानना

स्ट्रीट फोटोग्राफी एक ऐसी फोटोग्राफी शैली है जिसमें रोज़मर्रा की ज़िंदगी के सच्चे, दृश्य कैद किए जाते हैं, जैसे सड़कें, लोग, भावनाएं, रोशनी, छाया, और अचानक होने वाले पल। यह सिर्फ सड़क की फोटो लेना नहीं होता है, बल्कि शहर की आत्मा को पकड़ना और उससे एकाकार होना होता है। हर फोटो एक कहानी होती है। इसी फोटोग्राफी शैली पर राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति में फरवरी के आखरी हफ्ते में चार दिन की एक कार्यशाला आयोजित की गई। स्ट्रीट फोटोग्राफी: आर्ट ऑफ सेल्फ रियलाइजेशन पर कार्यशाला में जयपुर और राजस्थान से बाहर से आए प्रतिभागियों को दर्शनशास्त्र के प्रोफेसर शिवजी जोशी, जिन्होंने दुनिया भर में अपने फोटोग्राफी कौशल की धाक जमाई है, ने एडवांस फोटोग्राफी के गुर सिखाये। कार्यशाला का आयोजन राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति और जोधपुर की गुरुकुल ऑफ फोटोग्राफी आर्ट ने मिल कर किया था।

ऊपर फ़ोटोवॉक के दौरान प्रतिभागी जयपुर की ऐतिहासिक स्कूल ऑफ आर्ट के बाहर तथा बाये सुबह की चाय पर शिवजीजोशी और हिमांशु व्यास में गुफ्तगू।

कार्यशाला के दौरान शास्त्रीय गायक हुल्लास पुरोहित का राग 'बहार' का गायन, फाग के गीतों का सामूहिक गायन और कार्यशाला के समापन पर समूह चित्र। नीचे प्रतिभागी प्रमाणपत्र प्राप्त करते हुए।

कार्यशाला में फोटोग्राफी पर सैद्धांतिक विमर्श के साथ प्रायोगिक अनुभव के लिए गुलाबी नगरी की चारदीवारी के भीतर प्रतिभागियों शिवजी के साथ ने दो दिन सुबह फ़ोटो वॉक पर भी गये। कार्यशाला का एक सत्र फ़ोटो-जर्नलिज़्म पर भी हुआ जिसे समिति के सचिव हिमांशु व्यास, जो स्वयं जाने-माने फ़ोटो जर्नलिस्ट हैं, ने प्रस्तुत किया।

कार्यशाला का समापन 24 फरवरी को हुआ जिसके अंतिम सत्र में फ़ोटो वॉक में प्रतिभागियों द्वारा खींचे गये चित्रों का शिवजी ने विश्लेषण प्रस्तुत किया।

समापन से पहले प्रतिभागियों को शिवजी, वरिष्ठ पत्रकार और हरिदेव जोशी पत्रकारिता विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति ओम थानवी तथा जाने-माने फोटोग्राफर सुधीर कासलीवल ने प्रमाणपत्र बांटे।

कार्यशाला के दौरान एक शाम होली के राजस्थानी गीतों के गायन से सजी जिसमें जोधपुर और दिल्ली से आए अतिथि संगीत और रंगमंच के लोग भी शामिल हुए। दूसरी शाम फोटोग्राफी में शिल्प और कथ्य के अद्भुत साझे की झलक देने वाली लघु फिल्म 'फादर एंड डॉटर' का प्रदर्शन किया गया तथा सिनेमेटोग्राफी में रोशनी और छाया के प्रयोग का अनुभव प्रस्तुत करता जाने-माने सिनेमेटोग्राफर वी. के. मूर्ति का काम परदे पर देखा गया। तीसरी शाम शास्त्रीय गायन में अपनी पहचान बना रहे गायक हुलास पुरोहित ने बसंत के मौसम के अनुरूप बहार राग से सबका मन मोहा।

समिति में फोटोग्राफी पर यह तीसरी कार्यशाला थी। पहले की दो कार्यशालाएं बेसिक फोटोग्राफी पर थीं, मगर इस बार यह कार्यशाला एडवांस फोटोग्राफी पर केंद्रित थी। अगली एडवांस फोटोग्राफी की कार्यशाला पोर्ट्रेट फोटोग्राफी पर करने की शिवजी ने घोषणा की। ❑

ब्रांडिंग के युग में विश्वविद्यालय!

❑

❑

अविजित पाठक

समाजशास्त्री पाठक कह रहे हैं कि गलगोटियास यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर ने जो किया, उससे पता चलता है कि एक जुगाड़ू देश के लिए ओरिजिनल बनना आसान नहीं है। सं.

गलगोटिया यूनिवर्सिटी के एक प्रोफेसर ने हाल ही में देश की राजधानी में हुए इंडिया एआई इम्पैक्ट समिट में जो विवाद खड़ा किया, यकीन जानिए उससे मुझे कोई हैरानी नहीं हुई। प्रोफेसर नेहा सिंह को अपनी यूनिवर्सिटी की 'अचीवमेंट' दिखाने के लिए झूठा दावा करने में ज़रा भी हिचकिचाहट महसूस नहीं हुई। हम सबने देखा कि उन्होंने सरकारी प्रसारक डीडी न्यूज़ को कैसे बताया - और वह भी उस तरह की 'स्मार्टनेस' के साथ जो हम कॉर्पोरेट कंपनियों द्वारा अपने प्रोडक्ट बेचने के लिए हायर किए गए सोफिस्टिकेटेड सेल्सपर्सन में देखते हैं। दावा किया गया कि 'ओरियन' नाम का रोबोटिक डॉग यूनिवर्सिटी के सेंटर ऑफ़ एक्सीलेंस में डेवलप किया गया था, जबकि कड़वा सच यह है कि इस रोबोट को चीनी रोबोटिक्स कंपनी 'यूनिट्री' ने इन्वेंट किया है, और यह इंडिया में ऑनलाइन बेचा जाता है।

मुझे हैरानी नहीं है क्योंकि हमारी पीढ़ी ने विश्वविद्यालय के जिस आदर्श को संजोया था, वह टूट गया है। हमने सोचा था कि विश्वविद्यालय को पढ़ाई-लिखाई और मतलब वाली रिसर्च, क्रिटिकल थिंकिंग और नैतिक समझ, और सबसे बढ़कर, पढ़ाने के काम की इज्ज़त के लिए पहचाना जाना चाहिए। हमारा मानना था कि क्वालिटी के हिसाब से विश्वविद्यालय एक ऐसी जगह है जो किसी बिज़नेस, शॉपिंग मॉल या एडवरटाइजिंग एजेंसी से अलग होती है। लेकिन, हम बिल्कुल अलग समय में जी रहे हैं। जैसे-जैसे बाज़ार से चलने वाली नियोलिबरल सोच एकेडमिक स्पेस पर कब्ज़ा करने लगी है, एजुकेशन पूरी तरह से बिज़नेस बन गई है, क्रिटिकल थिंकिंग की बलि दी जा रही है, स्टूडेंट कंज्यूमर बन गया है और टीचर सर्विस प्रोवाइडर की भूमिका निभा रहा है। इसलिए कोई हैरानी नहीं कि एक यूनिवर्सिटी भी अपनी 'ब्रांड' वैल्यू बेचना शुरू कर देती है - जैसे कोई कंपनी डिटर्जेंट पाउडर बेचती है और अपने प्रोडक्ट के फायदों के बारे में हर तरह के झूठे या बढ़ा-चढ़ाकर दावे करती है।

असल में, रोबोटिक्स, डेटा साइंस, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस - ये फैंसी 'प्रोडक्ट' हैं जिन्हें नियोलिबरल यूनिवर्सिटी स्ट्रेटेजिक एडवरटाइजिंग और बढ़ा-चढ़ाकर किए गए दावों के ज़रिए बेचना चाहती है। इसलिए अगर कोई यूनिवर्सिटी आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के क्षेत्र में अपनी उपलब्धियों के बारे में झूठा दावा करती है तो आपको और मुझे हैरानी क्यों होनी चाहिए? एक तरह से, मैं प्रोफेसर नेहा

सिंह को दोष नहीं देता क्योंकि वह आखिरकार एक ऐसे कल्चर की प्रोडक्ट हैं जो एक यूनिवर्सिटी को प्रॉफिट कमाने वाला बिजनेस, एक प्रोफेसर को पब्लिक रिलेशन एजेंट और एक स्टूडेंट या पेरेंट को एक पोटेंशियल कस्टमर बना देता है।

भले ही गलगोटिया यूनिवर्सिटी अब खबरों में है, मगर सच तो यह है कि किसी यूनिवर्सिटी को 'ब्रांड' के तौर पर बेचना न्यू नॉर्मल है। और एजुकेशन का इस तरह का खुला उत्पाद बनाया जाना, जिसे मैं 'रैंकिंग' की पॉलिटिक्स मानता हूं, उससे और बढ़ा-चढ़ाकर दिखाया गया है।

बिलबोर्ड या चमकदार मैगज़ीन और अखबारों में शानदार विज्ञापन देखें, और आप आसानी से देख सकते हैं कि इन सभी संस्थानों को टॉप रैंकिंग यूनिवर्सिटी के तौर पर कैसे दिखाया जाता है। और ऐसी रैंकिंग एजेंसियों की कोई कमी नहीं है जिन्हें ये विश्वविद्यालय लगातार हायर करते हैं और इनवाइट करते हैं। इन विश्वविद्यालयों की ध्यान से बनाई गई छवि अक्सर उनकी अचीवमेंट्स और, सबसे बढ़कर, उनके 'प्रोडक्ट्स' को, जैसे गूगल, इंफोसिस, विप्रो, अमेज़न वगैरह से मिलने वाले 'पैकेज' के बारे में हर तरह के बढ़ा-चढ़ाकर किए गए दावों से भरी होती हैं। मुझे नहीं पता कि मैं हंसूंगा या रोऊंगा जब मैं किसी यूनिवर्सिटी को इस तरह के शानदार विज्ञापन के ज़रिए खुद को 'शॉप' के तौर पर बेचते हुए देखूंगा: यूनिवर्सिटी ने क्यूएस वर्ल्ड यूनिवर्सिटी रैंकिंग्स में एशिया में 2026 में एक और माइलस्टोन हासिल किया है, जहां इसे दक्षिणी एशिया में 116वें और पूरे एशिया में 454वें स्थान पर रखा गया है... 98% टॉप कंपनियों में जगह मिली है; 5.4 एलपीए एवरेज पैकेज; और 1.5 करोड़ का हाईएस्ट पैकेज। इस तरह के माहौल में, एक प्रोफेसर सच की तलाश करने वाला नहीं हो सकता; उसे भी उस यूनिवर्सिटी की 'ब्रांड' वैल्यू के बारे में झूठे या बढ़ा-चढ़ाकर दावे करने पड़ते हैं जिसने उसे हायर किया है। हां, मैं प्रोफेसर नेहा सिंह की मानसिक उलझन समझता हूं। इसके अलावा, जिंदा रहने के लिए, इन सभी एजुकेशन शॉप्स को लगातार रूलिंग गवर्नमेंट को खुश करना पड़ता है। यह मत भूलिए कि गलगोटिया यूनिवर्सिटी को, जैसा कि रिपोर्ट्स बताती हैं, एग्ज़िबिशन स्पेस में चार आईआईटी को मिले बूथों से भी बड़ा बूथ मिला। खासकर तब जब हमें बताया जाता है कि भारत को एक 'विश्वगुरु' के तौर पर आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस में पीछे नहीं रहना चाहिए। टेक्नो-यूटोपियनिज़्म का लेटेस्ट ब्रांड जिसे कॉर्पोरेट अरबपति बेचने के लिए बेताब हैं। गलगोटिया यूनिवर्सिटी ने शायद सत्ताधारी सरकार को खुश करने के लिए सारी हदें पार कर दीं और, अजीब बात है कि, सरकार को शर्मिंदगी भी हुई। सच में, यह देश में पॉलिटिक्स और एजुकेशन की हालत पर एक दुखद कमेंट है।

एक चीनी रोबोटिक डॉग को भारतीय आविष्कार के तौर पर पेश करने की यह अजीब इच्छा यह भी दिखाती है कि हम भारत को एक नकल करने वाला देश बनाने में शर्म महसूस नहीं करते। शायद, हम अभी तक अपनी चेतना को उपनिवेशवाद से मुक्त करने में कामयाब नहीं हुए हैं।

आज़ादी के बाद के भारत में भी, 'विकसित' पश्चिम हमारे लिए एक पॉज़िटिव रेफरेंस पॉइंट के तौर पर मौजूद है। उदाहरण के लिए, अपने खास एकेडमिक कल्चर को बेहतर बनाने और अपने ऐसे संस्थान बनाने के बजाय, जो स्थानीय ज़रूरतों और चुनौतियों के हिसाब से कॉन्फिडेंट और सही हों, हम ऑक्सफ़ोर्ड, कैम्ब्रिज, हार्वर्ड या प्रिंसटन को अपने रोल मॉडल के तौर पर देखते रहते हैं। मुझे सच में दुख होता है जब मैं देखता हूं कि भारत में एक अच्छे कॉलेज/यूनिवर्सिटी को पूरब का 'ऑक्सफ़ोर्ड' माना जाता है!

इसके अलावा, हमें यूरोपियन /अमेरिकन फ़ैशन की नकल करना पसंद है; बॉलीवुड प्रोड्यूसर और डायरेक्टर को सफल वेस्टर्न फिल्मों की नकल करते देखना कोई नई बात नहीं है, और जैसा कि कहा जाता है, हमारे ज़्यादातर टेक्नोलॉजिकल/बिज़नेस इनोवेशन ओरिजिनल क्रिएशन के बजाय चीनी या वेस्टर्न अडैप्टेशन होते हैं। क्या यह कहना पूरी तरह गलत होगा कि फ्लिपकार्ट अमेज़न की खराब कॉपी है, या ज़ोमैटो डोरडैश की नकल कर रहा है? और यह कॉपी-पेस्ट कल्चर, हर कोई जानता है, एकेडमिक सर्किट में काफी आम है। जिस तरह से रिसर्च पेपर बनाए जाते हैं, और, मानविकी और सोशल साइंस में, हर कोई जूडिथ बटलर और मिशेल फौकॉल्ट की शब्दावली की नकल करने लगता है। वास्तव में, गलगोटियास यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर ने जो किया, उससे पता चलता है कि एक नकल करने वाले देश के लिए ओरिजिनल बनना आसान नहीं है।❑

राजस्थानी दूहों में सर्वकालिक शिक्षा

❑

डॉ. कन्हैयालाल खाँड़पकर

आखर या अक्षर की महिमा व्यक्त करता जोधपुर के महाराज मानसिंह के इस दूहे के साथ राजस्थानी भाषा के विद्वान का यह आलेख न केवल राजस्थानी 'नीति काव्य' की थाती को बयान करता है बल्कि जीवन की शिक्षा भी देता है। सं.

❑

काठियावाडी सामंत लाखा अपने समय की जानी-मानी हस्ती था। उसके अप्रतिम गुणों के कारण जन मानस में उसकी स्मृति आज भी अक्षुण्ण है। गुणनिधान सामंत लाखा ने एक दिन अपनी रानी, अपनी बेटी व उसकी धाय की उपस्थिति में चौपड़ खेलते हुए, जीवन की अल्प अवधि के संदर्भ में धनड्यों कोअपनी संपदा का सदुपयोग करने का आह्वान करते हुए कहा: धनवंतां धन बांटजो लखौ कहे सुभट्ट/ गिणिया जासी दिहड़ा के दस के अट्ठ। अर्थात धनाड्य लोगों! अपनी धन संपदा को नदान के रूप में बांटने का सत्कार्य करना। लाखा का आपसे आग्रह है क्योंकि जीवन के तो गिने चुने आठ-दस दिन है।

जीवन की अनित्यता व सीमित अवधि को दर्शाने वाले लाखा द्वारा उच्चारित इस दूहे की कमी को उसकी बुद्धिमती रानी ने तुरंत ताड़ लिया और अनित्यता के तथ्य को अधिक उजागर करते हुए वह बोली: फूलांणी फेर घ घणों आठाँ सू दस दूर/ सांझै देख्या मलपता नहीं उगंतै सूर। अर्थात हे फूलांणी (फूलाजी पुत्र) आपकी बात और हक़ीक़त में बहुत अंतर है। आठ और दस के बीच तो बड़ा अंतराल है। दो दिनों की तो बात छोड़िये, संध्या समय जिन्हें राग-रंग में डूबा देखा, सूर्योदय होने पर पता चला कि वे दुनिया से उठ गये हैं।

यद्यपि रानी ने संध्या व सूर्योदय के संदर्भ में जीवन रेखा की लघुता का आभास करवाया किन्तु जीवन की अनिश्चयता को लेकर तो यह अवधि भी राजकुमारी को सुदीर्घ प्रतीत हुई। अपनी मां की बात में निहित्त भूल को रेखांकित करटे हुए वह बोली: लाखौ भूलौ लखबरियां अमांय भूली दोय/ आंख तणै फारूकडै कुण जाणै क्या होय। अर्थात लाखा तो लाख टके की बात भूल गया, जो जीवन के दिन गिनती के आठ-दस होने का जिक्र किया। मां भी दो बातें भूल गयी, जो संध्या और सूर्योदय का हवाला दे रही है। इन दोनों के बीच तो लंबी रात है। लंबी रात की

बात तो छोड़ो, कौन जानता है पालक झपकते क्या घटित हो जाए?

लाखा, उसकी रानी व बेटी के इस अर्थपूर्ण संवाद को पास बैठी धाय सुं रही थी। यद्यपि तीनों के कथं में जीवन की अल्प अवधि की क्रमशः उच्च आरोहण करती प्रस्तुति थी फिर भीधाय को लगा तीनों जीवन के मूल सत्य की अनदेखी कर गये हैं। वह है सांस का आना- जाना। सारा जीवन उसी पर निर्भर है। इस तथ्य को उजागर करते हुए वह बोली : लाखौ भूलौ, अमांय भूली, भूली म्हारी लोय/ सांस वटाऊ पांवणों आणा होय न होय। अर्थात लाखा भूल गया, मां भूल गयी, और मेरी बच्ची (राजकुमारी) भी भूल गयी। तीनों इस बात को विस्मृत कर गये कि आठ-दस दिन, सांझ सवेरे या पालक झपकने तक जीवन की अवधि, सभी सांस के खेल हैं। और सांस तो पथिक पाहुना (अतिथि) है, आये न आये।

उमा पूछै लच्छमी सूमां घर क्यूं जाय/ दाता, पंडित, शूरमा क्यूं नहीं आवै दाय।

पंडित घर मम सोक है दाता दे पर हत्थ/ शूरां घर रंडापणों यूं कर सूमां सथ्थ।

भगवती उमा ने लक्ष्मी से प्रश्न किया कि आप कंजूसों पर ही कृपालु क्यों होती हैं। पंडित, दाता और शूरवीर आपके मन को क्यों नहीं भाते? तीनों गुणीजनों से विमुख रहने के जो कारण लक्ष्मी ने गिनाये, वे अधिभौतिकता व उदात्त प्रवृत्ति की मूलतः विरोधी प्रकृति को उजागर करते हैं। लक्ष्मी बताती है कि पंडित के घर में तो मेरी सौत सरस्वती का सम्मान है और दाता मुझे दोसारे हाथों में सौंप देता है। मृत्यु का वरण करने को तत्पर शूरवीर के यहां मुझे वैधव्य भोगना पड़ता है। इस कारण मुझे कृपण का साथ परंड है। वह मुझे सदा सहेज कर बड़े जतन से रखता है।

पान झड़न्ता देखनै हंसी जो कूंपलियांह/ म्हां बीती था बीतसी धीमी बापड़ियांह

निरंतर गतिमान कालचक्र के सम्मुख कुछ भी सदैव एक जैसी स्थिति में नहीं बना रह सकता है। यौवन की लालिमा को पीतवर्ण म्लान होने में जरा भी समय नहीं लगता। तरुशिखा पर विहंसते किसलय द्वारा पीतवर्णी शिथिल गात्र पत्तों की दयनीय स्थिति का उपहास करने पर अनुभवी पत्ते नेक सलाह देते हैं कि अपनी रक्तिम आभा पर इतना इठलाना उचित नहीं। किसी दिन हम भी उस दहलीज पर खड़े थे। आज हमारी जो दशा है, उस स्थिति में तुम्हें ही निश्चित रूप से पहुंचना है। थोड़े संयम से काम लो। जरा अवस्था का उपहास नादानी है।

बाजरियां बलियां पछै मेहांकीनी मोग/ घाणी सूं खल ऊतरी हुई बलीता जोग।

'उद्यम से ही कार्यसिद्धि संभव है; उद्यमी पुरुष का लक्ष्मी वर्ण करती है', जैसी सूक्तियां उद्यम की महत्ता असंदिग्ध रूप से सिद्ध करती है किन्तु परिश्रम फलीभूत तभी होता है, जब समय रहते व्यक्ति सचेत व सक्रिय हो जाए अन्यथा उपयुक्त समय बीतने के पश्चात भले कितना ही परिश्रम किया जाय वह व्यर्थ है। जीवन की इंद्रधनुषी छटा देखते ही बनती है किन्तु यह सब कुछ तभी संभव है जब वर्षा की फुहारें ठीक समय पर धरती की प्यास बुझाएं। प्रचंड ताप से दग्ध चराचर को जल-धारा से सरोबार कर दे। अन्यथा जब आंखें वर्ष कि तरस रही हों तब टो सूखा पद जाय और उसके बाद धारासार वर्ष हो तो वह किस काम की? समय रहते किया गया कार्य ही सार्थक होता है। जब तक टीलों में तेल है उसका मूल्य है। खाली के रूप में वह ईंधन सम बन कर रह जाती है। व्यक्ति को भी चाहिये कि समय का सदुपयोग कर ले। ऊर्जा क्षय के पश्चात उसकी भी स्थिति काठ-कबाड़ के समां होना अवश्यंभावी है।❑

अनौपचारिका के प्रकाशन का विवरण
घोषणा (फार्म - 4)

1. प्रकाशन स्थल -जयपुर
2. प्रकाशन अवधि-मासिक
3. मुद्रक का नाम - राजेन्द्र बोड़ा
   राष्ट्रीयता - भारतीय
   पता - राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति,जयपुर-302004
4. प्रकाशक का नाम -राजेन्द्र बोड़ा
   पता -राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति,जयपुर-302004
5. मुद्रक का नाम - राजेन्द्र बोड़ा
   राष्ट्रीयता - भारतीय
   पता - राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति,जयपुर-302004
6. उन व्यक्तियों के नाम
   पते जो समाचार पत्र
   के स्वामी हो तथा जो समस्त पूंजी
   के एक प्रतिशत से अधिक के
   साझेदार हो या हिस्सेदार हों- राजस्थान प्रौढ शिक्षण समिति

मैं राजेन्द्र बोड़ा एतद् द्वारा घोषित करता हूं कि मेरी अधिकतम जानकारी के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य हैं।

मार्च, 2026

हस्ताक्षर
राजेन्द्र बोड़ा
संपादक, प्रकाशक , मुद्रक

बेहतर मानसिक स्वास्थ्य के लिए डायरी लिखें!

❑

❑

डॉ. प्रियंका रावल

विद्या भवन गोविंदराम सेकसरिया शिक्षक महाविद्यालय, उदयपुर की पूर्व सहायक आचार्य

डायरी लेखन से मन और मस्तिष्क को तंदरुस्त रखने की बात कर रही हैं। सं।

स्वास्थ्य मानव जीवन की सबसे बड़ी संपदा है। आमतौर पर मानव का शारीरिक स्वास्थ्य ही उसके उत्तम स्वास्थ्य को परिभाषित करता है। लेकिन शारीरिक स्वास्थ्य के साथ मानसिक स्वास्थ्य का उत्तम होना भी अति महत्वपूर्ण है तभी मानव पूर्ण रूप से स्वस्थ्य होगा।

मानसिक स्वास्थ्य से तात्पर्य व्यक्ति की उस मानसिक, भावनात्मक और सामाजिक स्थिति से है, जिसमें वह अपने विचारों, भावनाओं और व्यवहार को संतुलित रूप से नियंत्रित कर पाता है। यह केवल मानसिक रोगों की अनुपस्थिति नहीं है, बल्कि एक सकारात्मक और स्वस्थ मनःस्थिति का नाम है। मानसिक स्वास्थ्य वह अवस्था है जिसमें व्यक्ति स्वयं को समझता है और स्वीकार करता है, दैनिक जीवन के तनावों से संतुलन बनाकर निपटता है, अपनी क्षमताओं का सही उपयोग करता है तथा समाज में सकारात्मक और प्रभावी भूमिका निभाता है।

मानसिक स्वास्थ्य को दुरुस्त रखने में डायरी लेखन महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। मानव मन में अनेक भावनाएं, स्मृतियां और विचार एक साथ चलते रहते हैं। जब ये व्यक्त नहीं हो पाते, तो तनाव, चिंता और अवसाद का रूप ले लेते हैं। लेखन इन भावनाओं को सुरक्षित और निजी मंच देता है, जहां व्यक्ति बिना किसी भय के स्वयं से संवाद कर सकता है।

अनुसंधानों से यह सिद्ध हुआ है कि नियमित लेखन से चिंता में कमी आती है, अवसाद के लक्षण हल्के होते हैं तथा नींद और एकाग्रता में सुधार होता है। जब व्यक्ति अपने अनुभवों को लिखता है, तो वह उन्हें दूर से देखने लगता है। व्यक्ति को समस्याओं की जड़ समझ में आती है, उसे अपने व्यवहार और सोच के पैटर्न पहचान में आते हैं, तथा साथ ही निर्णय लेने की क्षमता बेहतर होती है। डायरी लेखन व्यक्ति को मैं क्यों ऐसा महसूस कर रहा हूं? जैसे प्रश्नों के उत्तर खोजने में मदद करता है।

डायरी लेखन आत्म-अभिव्यक्ति होती है। हर व्यक्ति के मन में असंख्य विचार, भावनाएं और संवेदनाएं होती हैं, जिन्हें वह हर समय दूसरों के साथ साझा नहीं कर पाता। डायरी एक सुरक्षित और निजी स्थान प्रदान करती है, जहां व्यक्ति बिना किसी भय या संकोच के अपने मन की बात लिख सकता है। यहां न आलोचना का डर होता है, न गलत समझे जाने की आशंका। इस प्रकार डायरी मन की बात कहने, उलझनों को सुलझाने और भावनात्मक संतुलन बनाए रखने में सहायक बनती है।

अपने दुःख, क्रोध, भय या असमंजस को लिखना मन का बोझ हल्का करता है। लेखन में व्यक्ति के दबे हुए भाव शब्दों में ढलकर बाहर आते हैं, मानसिक तनाव कम होता है तथा मन हल्का और शांत महसूस करता है। इसी कारण डायरी लिखना या भावनात्मक लेखन एक प्रकार की स्व-चिकित्सा माना जाता है।

डायरी लिखने से व्यक्ति को अपनी गलतियों, व्यवहार और आदतों का विश्लेषण करने का भी अवसर मिलता है। जब आप अपनी दिनचर्या को शब्दों में पिरोते हैं, तो आप बेहतर ढंग से समझ पाते हैं कि आपको अपने व्यक्तित्व में कहां सुधार करने की आवश्यकता है।

डायरी का उपयोग भविष्य की योजनाओं और लक्ष्यों को लिखने के लिए किया जा सकता है। अपनी प्रगति को ट्रैक करने से प्रेरणा मिलती है और व्यक्ति अपने उद्देश्यों के प्रति अधिक केंद्रित रहता है।

डायरी लेखन आत्मविश्लेषण का अत्यंत प्रभावी साधन है। जब व्यक्ति अपने दिनभर के अनुभवों, निर्णयों और प्रतिक्रियाओं को लिखता है, तो वह अनजाने में ही अपने व्यवहार का मूल्यांकन करने लगता है। यह प्रक्रिया आत्मबोध को गहरा करती है। व्यक्ति अपनी कमियों, खूबियों, आदतों और प्रवृत्तियों को पहचानने लगता है। नियमित डायरी लेखन से व्यक्ति अधिक सजग, विवेकशील और उत्तरदायी बनता है, क्योंकि उसे अपने कार्यों का लेखा-जोखा स्वयं के सामने प्रस्तुत करना होता है।

डायरी लेखन व्यक्ति के जीवन में अनुशासन लाने में सहायक होता है। जब व्यक्ति प्रतिदिन या नियमित रूप से डायरी लिखने का संकल्प लेता है, तो उसमें समय प्रबंधन और नियमितता का विकास होता है। इसके अतिरिक्त, डायरी में लक्ष्य, योजनाएँ और दैनिक कार्यों का उल्लेख करने से व्यक्ति अपने समय और ऊर्जा का बेहतर उपयोग कर पाता है। यह आदत जीवन को अधिक संगठित और उद्देश्यपूर्ण बनाती है।

अपने संघर्षों और उपलब्धियों को लिखना व्यक्ति को यह एहसास दिलाता है कि वह अकेला नहीं है, उसने कठिन परिस्थितियों को पार किया है तथा साथ ही वह स्वयं को स्वीकार करना सीख रहा है। यह आत्म-सम्मान और आत्मविश्वास को मजबूत करता है।

जब व्यक्ति अपने विचारों को स्पष्ट रूप से लिखने लगता है, तो उसका आत्मविश्वास बढ़ता है। डायरी में विभिन्न परिस्थितियों का विश्लेषण करने से निर्णय लेने की क्षमता भी सुदृढ़ होती है। व्यक्ति अपने अनुभवों से सीखता है और भविष्य में बेहतर निर्णय लेने के लिए स्वयं को तैयार करता है। इस प्रकार डायरी लेखन व्यक्तित्व विकास का एक प्रभावी साधन बन जाता है।

डायरी को अक्सर 'मौन मित्र' या 'गोपनीय सखा' कहा जाता है। यह वह साथी है, जो हर समय उपलब्ध रहता है, बिना किसी शर्त के सुनता है और कभी विश्वासघात नहीं करता। जिन भावनाओं को व्यक्ति किसी से कह नहीं पाता, उन्हें वह निःसंकोच डायरी में लिख देता है। इस दृष्टि से डायरी भावनात्मक सहारा प्रदान करती है।

डायरी लेखन मानसिक स्वास्थ्य को सुधारने, तनाव व चिंता को कम करने और भावनात्मक स्पष्टता लाने का एक सरल, किफायती और शक्तिशाली साधन हो सकता है। यह भावनाओं को व्यक्त करने का एक सुरक्षित स्थान प्रदान करता है, आत्म-जागरूकता बढ़ाता है, नकारात्मक पैटर्न पहचानने में मदद करता है और आत्म-चिंतन को बढ़ावा देता है। यह नियमित आदत आत्म-नियंत्रण को मजबूत करती है और मानसिक लचीलापन विकसित करती है, जो समग्र कल्याण के लिए महत्वपूर्ण है।

विद्यार्थियों के लिए भी डायरी लेखन केवल एक रचनात्मक अभ्यास नहीं, बल्कि मानसिक, भावनात्मक और बौद्धिक विकास का सशक्त माध्यम बन सकता है। नियमित लेखन से विद्यार्थियों में मानसिक संतुलन, शांति और आत्मिक सुदृढ़ता आती है। डायरी लेखन से विद्यार्थियों का मानसिक स्वास्थ्य दुरुस्त होता है क्योंकि यह मन की गहराइयों में छिपे भावों को उजागर कर उन्हें समझने और स्वीकार करने की शक्ति देता है।❑

अनुवाद सृजन का कायान्तरण होता है !

❑

❑

डॉ. प्रिया सूफी

अनुवाद का काम मूल लेखन को बनाए रखते हुए उसका पुनर्निर्माण होता है। लेखिका इस कठिन काम को रेखांकित कर रही है। सं.

मूल लेखक से इतर अनुवादक का कार्य बड़ा कठिन व दुरूह कार्य है, जिसमें अनुवादक को न केवल कृति से न्याय करना होता है, बल्कि उसके मूल लेखक एवं उसके समय से भी संवाद करना होता है।

मूल लेखक और विषय की प्रति अनुवादक के मन में सम्मान की भावना होना बहुत जरूरी है। विषय जितना अनुवादक के दिल के करीब होगा वह उतना ही उसके प्रति जागरूक और समर्पित होगा।

अनुवादक को मूल लेखक के भाव न केवल ज्यों के त्यों समझने होते हैं बल्कि अपने अनुवाद में भी उतारने होते हैं। कृतियां हजारों वर्ष पुरानी भी हो सकती हैं। उनके लेखकों अथवा कवियों के भावों पर परिवेश, सामाजिक स्थितियां, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक परिस्थितियां और वैयक्तिक स्थितियां भी प्रभाव डालती हैं। जरूरी तो नहीं कि एक व्यक्ति एक ही समय में पूरी पुस्तक लिख दे। कुछ खंड एक समय लिखे गए हों और कुछ दूसरे अलग समय और अलग परिस्थितियों में। ऐसे में एक ही कृति के खंडों में कितने भावजन्य विविधताएं हो सकती हैं। एक अनुवादक को उन सब को समझ कर कृति के पाठों के आधार पर उनका अनुवाद करना होता है। इसके लिए अनुवादक का अपने कार्य के प्रति जुनून ही काम आता है।

हर अनुवादक भीतर कहीं एक अच्छा लेखक होता ही है। उसे अपने मौलिक लेखन को मौन कर किसी और की लिखी रचना के साथ न्याय करना होता है। अनुवादक को अपने अहं भाव को छोड़ना होता है, जो सब से मुश्किल काम भी है। अगर अनुवादक अपनी लेखन शैली का अनुसरण करेगा तो मूल का स्वर खो जाएगा।

अनुवाद में भाषा विशेष स्थान रखती है। भाषा और शब्दों का चयन अनुवाद को मूल कृति से भी अधिक खूबसूरत बना सकता है।

हर लेखक की सोच अलग होती है और सोच के अनुरूप बात को समझने का सलीका भी अलग होता है। एक अनुवादक को उसी सोच को समझ कर उसी के अनुसार कृति का अनुवाद करना होता है। कई बार अनुवादक को ऐसा भी प्रतीत हो सकता है कि मूल कृति में अगर इस विशिष्ट घटना या

समस्या को इस तरह नहीं बल्कि इस प्रकार लिखा जाए तो कृति और भी खूबसूरत हो जाएगी। परन्तु अनुवादक को हर कदम पर ध्यान रखना होता है कि वह न तो समीक्षक है और न ही संशोधक। वह केवल अनुवादक है जिसका कार्य कृति के मूल स्वरूप को कायम रखते हुए उसका दूसरी भाषा में अनुवाद करना है, जिसमें संशोधन संभव नहीं है। वह कृति के मूल स्वर को खंडित नहीं कर सकता। अनुवाद में मूल लेखक के भावों को समझना और उन्हें उसी प्रकार व्यक्त करना होता है।

पुरातन कृतियों का अनुवाद बहुत मुश्किल होता है। क्योंकि आप न तो मूल लेखक को जानते हैं, न उनसे पूछ सकते हैं कि कहां क्या सोच कर ऐसा लिखा गया है। ऐसे में अनुवादक को भूमिका बहुत बढ़ जाती है। उसे अपनी सहज सोच और विषय के प्रति गहरी रुचि और ज्ञान पर पूर्णतया निर्भर होना होता है। पुरातन समय के परिवेश को समझना, विकास की उसी पहली सीढ़ी तक जाना, उस समय के लोगों के रहन सहन को अन्य कृतियों से समझना यह सब बहुत जरूरी हो जाता है। इसमें लेखक का अनुभव और विषय के प्रति समर्पण ही काम आता है।

अनुवादक के पास अपनी बात को स्पष्ट करने के लिए भरपूर उदाहरण होने बेहद जरूरी है। अगर वह किसी तकनीकी अथवा पुराने विषय की पुस्तक का अनुवाद कर रहा है तो उस के पास हर स्थापना के लिए एक सबल उदाहरण होना आवश्यक है। उससे भी बढ़ कर उसे अपने दिए हुए उदाहरण पर दृढ़ विश्वास होना भी जरूरी होता है। नहीं तो वह स्वयं अपनी ही स्थापना पर कायम नहीं रह पाएगा। ऐसे अनुवादों में अनुवादक फुटनोट में अपनी बात अलग से रख सकता है और अपने विचार भी प्रकट कर सकता है।

अनुवादक अपनी लेखकीय क्षमता को मौन रख कर मूल कृति को पूरी तरह से तभी प्रकट कर सकता है जब अनुवाद होने वाली कृति को अनुवादक भी उसी प्रकार जीता है जैसे कि मूल लेखक ने जिया। वह भी उतना ही विषय में डूबता है जितना कि मूल लेखक। तभी अनुवादक पूरे हक से कृति को अपनी क्षमताओं से सजा सकता है और ज्यादा रोचक बना सकता है। ऐसे बहुत से उदाहरण हैं कि मूल कृति से ज्यादा उनके अनुवाद न केवल सराहे गए हैं बल्कि पुरस्कृत भी हुए हैं। अनुवादक की दमदार भूमिका से इनकार नहीं किया जा सकता।❑

बापू के कथन

मेरा मार्ग स्पष्ट है। मेरे पास कोई गोपनीय तरीके नहीं हैं। मैं सत्य के अलावा कोई कूटनीति नहीं जानता। मेरे पास अहिंसा के अलावा कोई हथियार नहीं है। मैं कुछ समय के लिए विवेक से भटक सकता हूं, परन्तु हमेशा के लिए नहीं। मैं सबसे उत्तम उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भी हिंसक तरीकों का कड़ा विरोधी हूं। इसलिए हिंसा के समर्थकों और मेरे बीच कोई मेल-मिलाप का कोई आधार नहीं है। परन्तु मेरा अहिंसा का सिद्धांत मुझे अराजकतावादियों और हिंसा में विश्वास रखने वालों के साथ संगति करने में बाधक नहीं बनता है। मेरी उनसे संगत सदैव केवल उन्हें हिंसा की सोच से मुक्त करने के लिए होती है जो मुझे उनकी भूल प्रतीत होती है। अनुभव ने मुझे सिखाया है कि असत्य और हिंसा से स्थायी भला कभी नहीं हो सकता। यदि मेरा यह विश्वास एक भ्रम भी है, तो यह स्वीकार किया जाना चाहिए कि यह एक आकर्षक भ्रम है। (यंग इंडिया 11.12.1924)

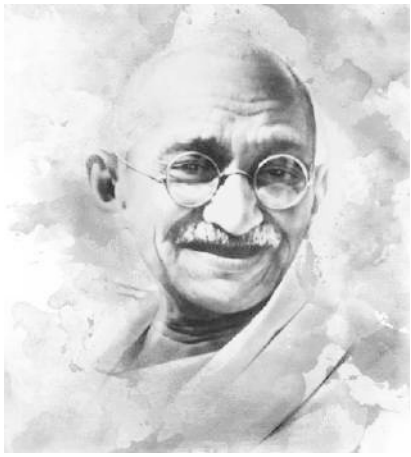

मेरी योजना के तहत राज्य लोगों की इच्छा पूरी करने के लिए होगा, न कि उन्हें आदेश देने के लिए, या अपनी इच्छा पूरी करने के लिए मजबूर करने के लिए। मैं अहिंसा के माध्यम से आर्थिक समानता लाऊंगा, लोगों को मेरे दृष्टिकोण के अनुसार परिवर्तित करूंगा, घृणा के विरुद्ध प्रेम की शक्तियों का उपयोग करूंगा। मैं तब तक इंतजार नहीं करूंगा जब तक कि मैं पूरे समाज को अपने दृष्टिकोण के अनुसार परिवर्तित नहीं कर लेता, बल्कि सीधे अपने आप से शुरुआत करूंगा।

हरिजन 31-3-46

राजस्थान में कृषि शिक्षा में निवेश की जरूरत

प्रो. प्रकाश नारायण कल्ला

मरुस्थल कहलाने वाले राजस्थान में कृषि शिक्षा युवाओं के लिए रोजगार के नये रास्ते खोल सकती है। इसी पर वरिष्ठ कृषि शिक्षाविद् अपनी विश्लेषणात्मक राय व्यक्त कर रहे हैं। सं.

राजस्थान की लगभग 70 प्रतिशत आबादी कृषि और उससे जुड़ी गतिविधियों पर निर्भर है, लेकिन कृषि में बेहतर तकनीक, आधुनिक प्रबंधन और वैज्ञानिक पद्धतियों की आवश्यकता आज भी बरकरार है, जिससे उच्च शिक्षा में कृषि विषय का महत्व समझा जा सकता है। कृषि शिक्षा न केवल तकनीकी कौशल उपलब्ध कराती है, बल्कि राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिस्पर्धी कृषि विज्ञान में राजस्थान की भागीदारी को भी सक्षम बनाती है।

कृषि क्षेत्र की भूमिका और उसकी उच्च शिक्षा की आवश्यकता इसलिए है क्योंकि यह राजस्थान की अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार है। 2023-24 की आर्थिक समीक्षा के अनुसार कृषि एवं संबद्ध क्षेत्र का सकल राज्य मूल्य वर्धन लगभग 3.82 लाख करोड़ रुपये है, जो राज्य की अर्थव्यवस्था में लगभग 26.72 प्रतिशत योगदान देता है।

यह साफ दिखाता है कि कृषि न केवल आजीविका का साधन है, बल्कि राज्य की आर्थिक संरचना में इसका अत्यधिक महत्व है। इसी कारण उच्च शिक्षा में कृषि की भूमिका अत्यंत आवश्यक हो जाती है, ताकि युवा वर्ग कृषि तकनीकों, वैज्ञानिक शोध, और व्यावसायिक प्रबंधन के माध्यम से इस क्षेत्र को और सशक्त कर सके।

अच्छी बाट यह है कि राजस्थान में कृषि शिक्षा का ढांचा काफी विकसित है। राज्य में कई कृषि विश्वविद्यालय, महाविद्यालय और कृषि संकाय हैं जो उच्च शिक्षा में कृषि को एक मुख्य विषय के रूप में पढ़ाते हैं। सार्वजनिक और निजी दोनों क्षेत्रों के ये विश्वविद्यालय न सिर्फ बी.एस.सी., एम.एस.सी., पीएचडी आदि डिग्रियां प्रदान करते हैं, बल्कि अनुसंधान, तकनीकी प्रशिक्षण, और खेती-केन्द्रित परियोजनाओं में भी अग्रणी भूमिका निभाते हैं। निजी कृषि महाविद्यालयों में भी बेहतर शिक्षण सुविधाएँ और आधुनिक प्रयोगशालाएं हैं। आधिकारिक आंकड़ों के अनुसार राजस्थान में करीब 84 कृषि महाविद्यालय सक्रिय हैं, जिनमें से प्राथमिक रूप से कृषि विषय में डिग्री प्रदान की जाती है।

शिक्षा की गुणवत्ता को परखने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर मानदंड होते हैं।

उनके आंकड़े दिखाते हैं कि कृषि शिक्षा के क्षेत्र में राजस्थान की उपस्थिति अच्छी हैं, हालांकि गुणवत्ता में निरंतर सुधार की आवश्यकता जरूर बनी हुई है।

छात्र उच्च शिक्षा में कृषि क्यों चुनते है उस पर एक अध्ययन की रिपोर्टर पिछले साल आई है, जिसमें राजस्थान के 200 अंतिम वर्ष के कृषि छात्रों का सर्वे शामिल है। इस सर्वे से पता चला कि छात्रों के कृषि विषय को चुनने के प्रमुख कारण थे: बेहतर करियर संभावनाएँ (83.50 प्रतिशत), रुचि और किसान जीवन को सुधारने की इच्छा (लगभग 79 प्रतिशत), उच्च आय की उम्मीद (लगभग 59.50 प्रतिशत), माता-पिता की सलाह (63.50 प्रतिशत)।

यह दर्शाता है कि युवा विद्यार्थी कृषि को रोजगार-उन्मुख और सामाजिक परिवर्तन के लिए उपयुक्त करियर विकल्प के रूप में देखने लगे हैं। इससे पता चलता है कि उच्च कृषि शिक्षा केवल शैक्षणिक विषय नहीं रही, बल्कि ग्रामीण और कृषि-समर्थित रोजगार की दिशा में भी एक मज़बूत मार्गदर्शक बन चुकी है।

राज्य सरकार ने कृषि को शिक्षा से जोड़ने के लिए कई कदम उठाए हैं। उदाहरण के लिए 398 राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों में कृषि को अब पूर्ण कृषि संकाय के रूप में संचालित करने की पहल की गई है, ताकि शुरुआती स्तर से ही विद्यार्थियों को कृषि की बुनियादी समझ और कौशल मिलें। नीति-निर्माता यह मानते हैं कि उन्नत कृषि शिक्षा नई तकनीकों, शोध-आधारित समाधानों, और तर्कसंगत खेती प्रथाओं को किसानों तक पहुंचाने का प्रभावी माध्यम है।

लेकिन इस क्षेत्र में चुनौतियां भी हैं। सबसे बड़ी है पैसे की कमी। राज्य के कई उच्च शिक्षा संस्थानों पर वित्तीय दबाव स्पष्ट है, जिससे अधिक शोध, प्रयोगशाला निवेश या उच्च गुणवत्ता आधारित परियोजनाओं में बाधा आती है। कई संस्थानों में शिक्षकों और कर्मचारियों के पद रिक्त हैं, जिससे शिक्षण और अनुसंधान दोनों प्रभावित हो रहे हैं।

तकनीकी संसाधनों की कमी भी सामने आ रही है। किसानों और विद्यार्थियों के बीच तकनीकी शिक्षा के अंतर को पाटने के लिए और बेहतर डिजिटल कृषि तकनीक शिक्षण, इन्फ्रास्ट्रक्चर और व्यावहारिक प्रशिक्षण की आवश्यकता है, जिसके लिए कृषि शिक्षा में अधिक निवेश की आवश्यकता है।

हालांकि राजस्थान में कृषि शिक्षा का का भविष्य उज्जवल है, किन्तु किसानों से युवा पीढ़ी को जोड़ने के लिए व्यावसायिक कृषि प्रबंधन, डिजिटल कृषि, जैव-तकनीक आधारित खेती, जल-प्रबंधन आदि क्षेत्रों में उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रमों का समावेश महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

इसके साथ ही कृषि शिक्षा को बाजार-उन्मुख कौशल, स्टार्ट-अप एवं कृषि उद्यमिता, और पर्यावरण-अनुकूल खेती जैसे क्षेत्रों में आगे बढ़ने की आवश्यकता है। इससे न केवल विद्यार्थियों पढ़ाई पूरी होने के बाद रोजगार मिल सकेगा, बल्कि कृषि उत्पादन और ग्रामीण क्षेत्रों में अन्य रोजगार के अवसरों में भी वृद्धि होगी। हमें समझना होगा कि राजस्थान में उच्च शिक्षा और कृषि का संबंध केवल किताबी ज्ञान तक सीमित नहीं है। यह ग्रामीण अर्थव्यवस्था, तकनीकी विकास और युवाओं में कृषि-व्यवसाय को मजबूत करने वाली दिशा में बदल रहा है। कृषि शिक्षा ने राज्य की कृषि उत्पादन क्षमता को बढ़ाने के लिए एक सशक्त आधार प्रदान किया है, और भविष्य में आधुनिक तकनीकों और उद्यमशीलता आधारित शिक्षण को अपनाकर यह और आगे भी सुदृढ़ हो सकती है।❑

अविनाश भार्गव की याद

प्रौढ़ शिक्षा के क्षेत्र में उम्र भर अलख जगाने वाले अविनाश भार्गव की पहली पुण्यतिथि पर बीकानेर प्रौढ़ शिक्षण समिति ने बीकानेर में 'टीम प्रबंधन और संघर्ष समाधान' विषय पर एक संवाद कार्यक्रम रखा। संवाद की मुख्य अतिथी थीं, स्वामी केशवानंद कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर की असिस्टेंट प्रोफेसर डॉ. सीमा त्यागी।

प्रौढ़ शिक्षा भवन सभागार में दिनांक 12 फरवरी को आयोजित कार्यक्रम में अपने सम्बोधन में डॉ. त्यागी ने कहा कि जहां संवाद नहीं होता, वहां विवाद और मनमुटाव उत्पन्न होते हैं। संवाद स्थापित कर हर विवाद और मनमुटाव का समाधान निकाला जा सकता है।

अध्यक्षीय उद्बोधन में संस्था अध्यक्ष डॉ. ओम कुवेरा ने कहा कि समाज समूहों से बनता है और किसी भी समूह की मजबूती का आधार कुशल प्रबंधन होता है जिसके लिए निरंतर पारस्परिक विचार-विमर्श आवश्यक है।

विशिष्ट अतिथि डॉ. दीपाली धवन ने भी भार्गव के संस्था के प्रति लगाव एवं समर्पण को कार्यकर्ताओं के लिए प्रेरणास्रोत बताया।

संस्था सचिव श्रीमती सुशीला ओझा ने आगंतुकों का स्वागत करते हुए अविनाश भार्गव के संस्था के प्रति समर्पण को याद किया। संयुक्त सचिव डॉ. ब्रजरतन जोशी ने संस्था द्वारा प्रारंभ किए गए वैचारिक अनुष्ठान 'मनन के मार्ग पर' की अवधारणा पर प्रकाश डाला।

कार्यक्रम का संचालन कार्यक्रम अधिकारी महेश उपाध्याय ने किया। अंत में जन शिक्षण संस्थान, बीकानेर के अध्यक्ष एडवोकेट गिरिराज मोहता ने कार्यक्रम की सफलता में सहयोग देने वाले सभी आगंतुकों के प्रति आभार व्यक्त किया।❑

दिल्ली में नामवर सिंह जन्म शताब्दी राष्ट्रीय संगोष्ठी

दिल्ली स्थित हिंदू कॉलेज के हिंदी विभाग ने पिउछाले दिनों आलोचक नामवर सिंह की जन्मशताब्दी के अवसर पर दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया जिसमें ख्यातनाम लेखक के आलोचनात्मक योगदान और उनके वैचारिक सफर पर चर्चा की गई।

संगोष्ठी का उद्घाटन करते हुए कवि अरुण कमल ने कहा कि बीसवीं शताब्दी के विश्व के बड़े आलोचकों में अग्रगण्य नामवर जी अपनी आलोचना को भारतीय काव्य शास्त्र और पश्चिमी कविता विचार से तैयार करते हैं तथा उनकी आलोचना में वे साहित्य और समाज को जोड़कर देखते थे।

प्राचार्य प्रो अंजू श्रीवास्तव ने हिन्दू कालेज से प्रो नामवर सिंह के जुड़ाव की स्मृतियां साझा करटे हुए कहा कि वे बहुत महान अध्यापक भी थे जिनके विद्यार्थी आज भाषा और संस्कृति के क्षेत्र में अपना योगदान कर रहे हैं।

अतिथियों ने प्रो रचना सिंह द्वारा संपादित कृतियों विस्तार का वैभव का लोकार्पण भी किया। उद्घाटन सत्र में विभाग के प्रभारी प्रो बिमलेन्दु तीर्थंकर ने सेमिनार की रूपरेखा रखी और अतिथियों का स्वागत किया। संयोजन डॉ पल्लव ने किया।

समापन सत्र के मुख्य वक्ता नामवर जी के शिष्य और जामिया मिल्लिया इस्लामिया के पूर्व हिंदी विभागाध्यक्ष प्रोफ़ेसर महेंद्र पाल शर्मा ने अपने विद्यार्थी जीवन के अनेक संस्मरण सुनाए और नामवर जी स्मृतियां साझा की।❑

सरला माहेश्वरी नहीं रहीं

दूरदर्शन के 1980 और 1990 के दशक के सबसे जाने-माने चेहरों में से एक सरला माहेश्वरी का 12 जनवरी को दिल्ली में निधन हो गया। वह 71 साल की थीं।

सरला माहेश्वरी केवल खबर पढ़ने वाली नहीं, बल्कि एक विश्वसनीय, संतुलित और शालीन सार्वजनिक चेहरा थी। आज की तुलना में बिल्कुल भिन्न और कहीं अधिक गरिमामयी मानी जाती थी।

उन्होंने एक बार कहा था, यह बहुत ज़िम्मेदारी का काम था और इसे अच्छे से करने के लिए आपके पास कुछ हद तक मैच्योरिटी होनी चाहिए थी।

दिल्ली यूनिवर्सिटी से पीएचडी करते हुए माहेश्वरी दूरदर्शन में शामिल हुईं। तीन दशकों के करियर में, माहेश्वरी ने टेलीविज़न न्यूज़ को ब्लैक एंड व्हाइट से कलर ब्रॉडकास्ट में बदलते देखा।

माहेश्वरी, जिन्होंने 1976 से 2005 तक दूरदर्शन पर न्यूज़ रीडर के तौर पर काम किया।

आज की तरह 'एंकर-प्रधान' पत्रकारिता नहीं थी। समाचार वाचक स्वयं को केंद्र में नहीं रखते थे, बल्कि संस्था दूरदर्शन और राज्य का प्रतिनिधित्व करते थे। वे खबरों का विश्लेषण नहीं करते थे, न बहस चलाते थे; उनका काम तथ्यों को संतुलित ढंग से प्रस्तुत करना था।

दूरदर्शन की समाचार भाषा अत्यंत परिमार्जित और मानक हिंदी/अंग्रेज़ी में होती थी। आकाशवाणी की परंपरा से आए कई वाचकों में वाणी का अनुशासन और लय दिखाई देता था। यह भाषा-शुद्धता आज भी पत्रकारिता के विद्यार्थियों के लिए आदर्श मानी जाती।❑

RS-CIT
एक परिपूर्ण कंप्यूटर कोर्स !

RS-CIT एक विस्तृत बेसिक कंप्यूटर कोर्स है जिसकी मदद से कंप्यूटर के आवश्य कौशल सीख कर कंप्यूटर पर कार्य करने में दक्षता हासिल की जा सकती है एवं विभिन्न डिजिटल सुविधाओं के उपयोग के बारे में जानकारी प्राप्त की जा सकती है

RS-CIT कंप्यूटर कोर्स ही क्यों ?

ई-लर्निंग पर आधारित, ऑडियो-विडियो कंटेंट तथा चरणबद्ध असेसमेंट
राज्य सरकार की विभिन्न सरकारी नौकरियों में एक पात्रता ।
शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 6500 ज्ञान केंद्र ।
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय कोटा द्वारा परीक्षा एवं प्रमाण पत्र ।

अन्य कोर्सेज

- Financial Accounting
- Spoken English & Personality Development
- Desktop Publishing
- Digital Marketing
- Advanced Excel
- Cyber Security
- Business Correspondence

Rajasthan Knowledge Corporation Limited
IT shapes future
(A Public Limited Company Promoted by Govt. of Rajasthan)

नजदीकी ज्ञान केंद्र के लिए www.rkcl.in पर विजिट करें
या 9571237334 पर WhatsApp करें

स्वत्त्वाधिकारी राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति द्वारा क्लासीफाइड प्रिण्टर्स, जयपुर में मुद्रित तथा 7-ए, झालाना संस्थान क्षेत्र, जयपुर-302004 से प्रकाशित। संपादक- राजेन्द्र बोड़ा

अनौपचारिका: पृष्ठ-28, मार्च, 2026 रजिस्ट्रार ऑव न्यूज पेपर, नयी दिल्ली के द्वारा पंजीकृत मासिक पत्रिका RNI 43602/77 ISSN No.2581-981x

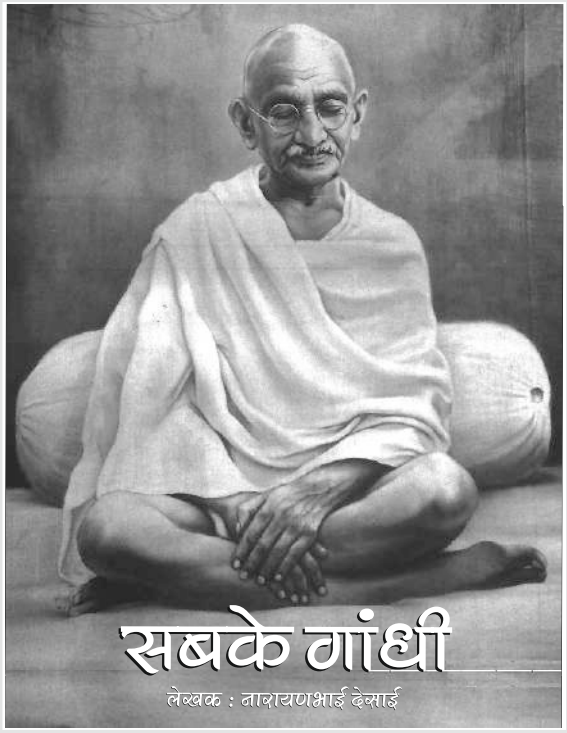

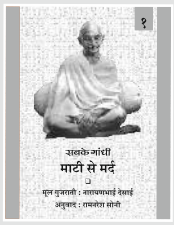

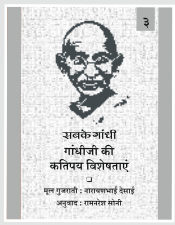

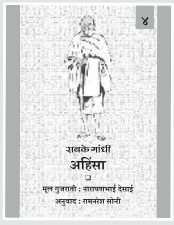

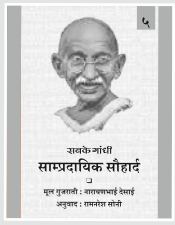

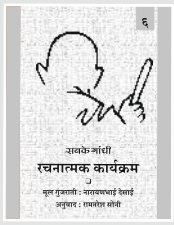

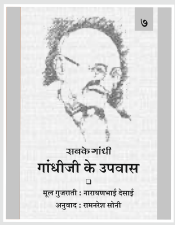

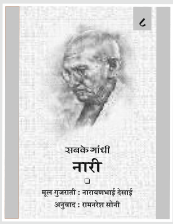

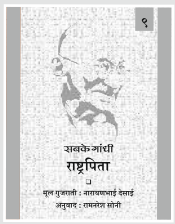

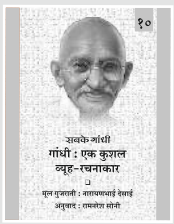

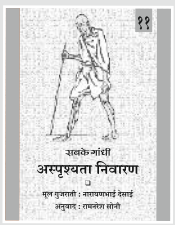

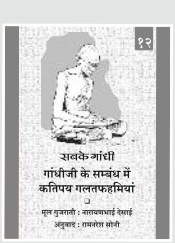

सहयोग राशि के लिए बैंक विवरण

BANK OF BARODA
Rajasthan Adult Education Association
Branch Name : IDS Ext.
Jhalana Jaipur
I.F.S.C. Code : BARB0EXTNEH
(Fifth Character is zero)
Micr Code : 302012030
Acct.No. : 98150100002077

राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति
7–ए, झालाना संस्थान क्षेत्र,
जयपुर–302004

सबके गांधी

राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति
7–ए, झालाना संस्थान क्षेत्र,
जयपुर–302004

12 पुस्तकों के एक सैट की सहयोग राशि रुपये 500/– मात्र डाक खर्च रुपये 75/– अलग से देय होगा।